

## भावार्थ : पाठ्यपुस्तक पृष्ठ क्रमांक २३, २४ : कविता – गुरुबानी – गुरु नानक

\* जो लोग गुरु से लापरवाही बरतते हैं और अपने आपको ही ज्ञानी समझते हैं; वे व्यर्थ ही उगने वाले तिल की झाड़ियों के समान हैं। दुनिया के लोग उनसे किनारा कर लेते हैं। इधर से वे फलते-फूलते दिखाई देते हैं पर उनके भीतर झाँककर देखो तो गंदगी और मैल के सिवा कुछ दिखाई नहीं देगा ॥ १ ॥

\* मोह को जलाकर उसे घिसकर स्याही बनाओ। बुद्धि को श्रेष्ठ कागज समझो ! प्रेमभाव की कलम बनाओ। चित्त को लेखक और गुरु से पूछकर लिखो- नाम की स्तुति। और यह भी लिखो कि उस प्रभु का न कोई अंत है और न कोई सीमा ॥ २ ॥

\* हे मन ! तू दिन-रात भगवान के गुणों का स्मरण कर जिन्हें एक क्षण के लिए भी नहीं भूलता। संसार में ऐसे लोग विरले ही होते हैं। अपना ध्यान उसी में लगाओ और उसकी ज्योति से तुम भी प्रकाशित हो जाओ। जब तक तुझमें अहंभाव या 'मैं, मेरा, मेरी' की भावना रहेगी तब तक तुझे प्रभु के दर्शन नहीं हो सकते। जिसने हृदय में भगवान के नाम की माला पहन ली है; उसे ही प्रभु के दर्शन होते हैं ॥ ३ ॥

\* हे प्रभो ! अपनी शक्ति के सब रहस्यों को केवल तुम्हीं जानते हो। उनकी व्याख्या कोई दूसरा कैसे कर सकता है? तुम प्रकट रूप भी हो, अप्रकट रूप भी हो। तुम्हारे अनेक रंग हैं। अनगिनत भक्त, सिद्ध, गुरु और शिष्य तुम्हें ढूँढ़ते-फिरते हैं। हे प्रभु ! जिन्होंने नामस्मरण किया, उनको प्रसाद में (भिक्षा में) तुम्हारे दर्शन की प्राप्ति हुई है। तुम्हारे इस संसार के खेल को केवल कोई गुरुमुख ही समझ सकता है। तुम्हारे इस संसार में तुम्हीं युग-युग में विद्यमान रहते हो और कोई नहीं ॥ ४ ॥

\* हे पंडित ! संसार में दिन-रात महान आरती हो रही है। आकाश की थाली में सूर्य और चाँद के दीपक जल रहे हैं। हजारों तारे-सितारे मोती बने हैं। मलय की खुशबूदार हवा का धूप महक रहा है। वायु चँवर से हवा कर रही है। जंगल के सभी वृक्ष फूल चढ़ा रहे हैं। हृदय में अनहद नाद का ढोल बज रहा है। हे मनुष्य ! इस महान आरती के होते हुए तेरी आरती की क्या आवश्यकता है, क्या महत्त्व है? अर्थात्, भगवान की असली आरती तो मन से उतारी जाती है और श्रद्धा ही भक्त की सबसे बड़ी भेंट है। फिर आप लोग थालियों में ये थोड़े-थोड़े फल-फूल लेकर मूर्ति पर क्यों चढ़ाते हैं? क्या उसके पास थालियों की कमी है? अरे ! आकाश ही उसका नीलम थाल है ! सूर्य और चंद्रमा की ओर देखो। वे भगवान की आरती में रखे हुए दीपक हैं। ये तारे ही उसके मोती हैं और हवा उसे दिन-रात चँवर झुला रही है ॥ ५ ॥

## भावार्थ : पाठ्यपुस्तक पृष्ठ क्रमांक २७, २८ : कविता – वृंद के दोहे

\* माँ सरस्वती के ज्ञान भंडार की बात बड़ी ही अनूठी और अपूर्व है। यह ज्ञान भंडार जितना खर्च किया जाए, उतना बढ़ता जाता है और खर्च न करने पर वह घटता जाता है अर्थात् ज्ञान देने से बढ़ता है और अपने पास रखने पर नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥

\* आँखें ही मन की सारी अच्छी-बुरी बातों को व्यस्त कर देती हैं... जैसे स्वच्छ आईना अच्छे-बुरे को बता देता है ॥ २ ॥

\* अपनी पहुँच, क्षमता को पहचानकर ही कोई भी कार्य कीजिए। जैसे- हमें उतने ही पाँव फैलाने चाहिए जितनी हमारी चादर हो ॥ ३ ॥

\* यदि आप व्यापार करते हैं तो व्यापार में छल-कपट का सहारा न लें। छल-कपट से किया गया व्यवहार ग्राहक को आपसे दूर ले जाता है। जैसे- लकड़ी (काठ) की हाँडी आग पर एक ही बार चढ़ती है, बार-बार नहीं क्योंकि लकड़ी पहली बार में ही जल जाती है ॥ ४ ॥

\* ऊँचे स्थान पर बैठने से बिना गुणोंवाला कोई भी व्यक्ति बड़ा नहीं बन जाता। ठीक वैसे ही जैसे मंदिर के शिखर पर बैठने से कौआ गरूड़ नहीं बन जाता ॥ ५ ॥

- \* दूसरे के भरोसे अपना कार्य अथवा व्यवसाय छोड़ देना उचित नहीं है। जैसे- पानी से भरे बादलों को देखकर पानी से भरा अपना घड़ा फोड़ देना बुद्धिमानी नहीं है ॥ ६ ॥
- \* दुष्ट अथवा छोटे व्यक्ति की संगति में रहना अथवा कुछ कहकर उसे छेड़ना श्रेयस्कर नहीं है। जैसे- कीचड़ में पत्थर फेंकने से वह कीचड़ हमपर ही उछलकर हमें गंदा कर देता है ॥ ७ ॥
- \* जो ऊँचाई पर, उच्च पद पर पहुँचता है, उसका नीचे उतर आना भी उतना ही स्वाभाविक है। जैसे- दोपहर के समय तपा हुआ दग्ध सूर्य शाम के समय अस्त हो जाता है, डूब जाता है ॥ ८ ॥
- \* जिसके पास गुण होते हैं, उसी के अनुसार उसे आदर प्राप्त होता है। जैसे- मधुर वाणी के कारण कोयल को आम प्राप्त होते हैं और कर्कश ध्वनि के कारण कौए को निबौरी (नीम का फल) प्राप्त होती है ॥ ९ ॥
- \* अविवेक के साथ किया गया कार्य स्वयं के लिए हानिकर सिद्ध होता है। जैसे- कोई मूर्ख अपनी अविवेकता से कार्य कर अपने पाँव पर अपने हात से कुल्हाड़ी मार बैठता है ॥ १० ॥
- \* पालने में बच्चे के लक्षण देखकर ही उसके अच्छे-बुरे होने का पता चल जाता है। जैसे- उत्तम बीज के पौधों के पत्ते चिकने अर्थात् स्वस्थ पाए जाते हैं ॥ ११ ॥

## भावार्थ : पाठ्यपुस्तक पृष्ठ क्रमांक ६५-६६ : कविता - सुनू रे सखिया और कजरी

### सुनू रे सखिया

- \* इसमें नायिका अपनी सखियों से कह रही है कि सुन सखी, बसंत ऋतु आ गई है, सब तरफ फूल महकने लगे हैं। बसंत ऋतु के आने से सरसों फूल गई है, अलसी अलसाने लगी, पूरी धरती हरियाली की चादर ओढ़ खिल उठी है। कली-कली फूल बनके मुस्कुराने लगी है। इस ऋतु के आने से खेत, जंगल सब हरे-भरे हो गए हैं, जिसकी वजह से तन-मन भी हुलसने लगे हैं। इंद्रधनुष के रंगों की तरह रंग-बिरंगे फूल खिल उठे हैं। कजरारी आँखों में सपने मुस्कुराने लगे हैं और गले से मीठे गीत फूटने लगे हैं। बगिया के साथ यौवन भी अंगड़ाइयाँ लेने लगा है। मधुर-मस्त बयार प्यार बरसाकर तार-तार रँगने लगी है। हर का मन गुलाब की तरह खिल रहा है। बाग-बगीचे हरे-भरे हो गए, कलियाँ खिलने लगीं, भौरा आस-पास मँड़राने लगे। गौरैया भी माथे पर फूल सजा इतराने लगी है। किंतु हे सखी, पिया के पास न होने से ये सब बबूल के काँटों की तरह चुभ रहे हैं। आँख में काजल धुल रहा है। आँसुओं की झड़ी लगी है पर बसंत फिर भी आ गया है फूलों की महक लेकर।

### कजरी

- \* मनभावन सावन आ गया। बादल घिर-घिर आने लगे। बादल गरजते हैं; बिजली चमकती है और पुरवाई चल रही है। रिमझिम-रिमझिम मेघ बरसकर धरती को नहला रहे हैं। दादुर, मोर, पपीहा बोलकर मेरे हृदय को प्रफुल्लित कर रहे हैं। जगमग-जगमग जुगनू इधर-उधर डोलकर सबका मन लुभा रहे हैं। लता-बेल सब फलने-फूलने लगे हैं। डाल-डाल महक उठी है। सावन आ गया है। सभी सरोवर और सरिताएँ भरकर उमड़ पड़ी हैं। हमारा हृदय सरस गया है। लोक कवि कहता है- 'हे प्रिय ! शीघ्र चलो, श्याम की बंसी बज रही है।'